VISION IAS

GENERAL STUDIES

GS

Complete Set

2023-24

HINDI MEDIUM

PRINTED MATERIAL

- **रक्षात्मक दृष्टिकोण:** शीत युद्ध का अनुसरण एक आक्रामक दृष्टिकोण के बजाये एक रक्षात्मक दृष्टिकोण के रूप में किया गया था। इसके पीछे मूल भावना यह थी कि स्वयं अपनी व्यवस्था (पूंजीवाद या साम्यवाद) और सीमाओं को सुरक्षित रखा जाए। दोनों महाशक्तियों ने इस प्रक्रिया में यथासम्भव मध्यवर्ती पूंजीवादी / साम्यवादी देशों के निर्माण का प्रयास किया।
- **नेताओं की भूमिका:** स्टालिन ने द्वितीय विश्व युद्ध के समय फिनलैंड, पोलैंड, रोमानिया, चेकोस्लोवाकिया और जर्मनी के यथासम्भव अधिक से अधिक क्षेत्रों पर अधिकार करने का प्रयास किया। इससे पश्चिमी शक्तियाँ चौकन्नी हो गईं। रूजवेल्ट की तुलना में **ट्रूमैन** USSR के प्रति अधिक संशकित था। **रूजवेल्ट** ने 1941 के लेंड लीज एक्ट के अंतर्गत द्वितीय विश्व युद्ध के समय रूस को हथियार, कच्चा माल, खाद्यान आदि प्रदान किया था। रूजवेल्ट की मृत्यु (अप्रैल 1945) के पश्चात् ट्रूमैन अमेरिका के राष्ट्रपति बने। उसने स्टालिन को विश्वास में लिए बिना जापान पर परमाणु बम से हमला कर दिया (1945)। स्टालिन को परमाणु बम की सटीक प्रकृति के संबंध में नहीं बताया गया था, जबकि चर्चिल को इसके बारे में सूचित किया गया था। द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् ट्रूमैन ने जापानी क्षेत्रों और इसके उपनिवेशों के बंटवारे में रूस को भाग लेने की अनुमति नहीं दी। स्टालिन और चर्चिल जैसे नेताओं के वक्तव्यों ने अंतर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में तनाव में वृद्धि की। उदाहरण के लिए **स्टालिन** ने तर्क दिया कि "पूंजीवाद पर अंतिम विजय तक पश्चिम के साथ सह-अस्तित्व असम्भव है।" **ट्रूमैन सिद्धांत** को शीत युद्ध के मुख्य कारणों में से एक माना जाता है।
- **डोमिनो प्रभाव (Domino Effect):** साम्यवाद पूंजीवादी देशों के लिए एक खतरा था और इसलिए इन देशों के नेताओं को साम्यवाद का भय था। आइजनहावर (1953-61) को डोमिनो प्रभाव का भय था, जिसके अंतर्गत यदि एक देश को साम्यवादी बनने की अनुमति दी गई तो पड़ोसी देश भी उसका अनुकरण करेंगे जो पूंजीवाद, लोकतंत्र और अमेरिका के आर्थिक एवं सैन्य हितों के लिए एक खतरे के रूप में था। डोमिनो प्रभाव के इस डर ने वियतनाम युद्ध (1961-75) में अमेरिका को भागीदार बनने के लिए विवश किया, क्योंकि चीन और उत्तर कोरिया के पश्चात् वियतनाम के एक साम्यवादी देश में परिवर्तित होने से जापान में साम्यवाद के व्युत्पन्न होने का भय व्याप्त हो जाता। उल्लेखनीय है कि द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् संयुक्त राज्य अमेरिका जापान को एक उन्नत पूंजीवादी अर्थव्यस्था बनाने के लिए बहुत अधिक सहायता प्रदान कर रहा था। यह एक ऐसा क्षेत्र था जो साम्यवाद के अधिक प्रभाव में आ रहा था।
- **मनोवैज्ञानिक भय:** बड़े स्तर पर साम्यवादी प्रचार के कारण जनता के बीच मनोवैज्ञानिक भय भी व्याप्त हो गया था क्योंकि शीत युद्ध के समय किये गये कार्यों को जनता का समर्थन प्राप्त हुआ था।
- **संयुक्तराष्ट्र संघ की विफलता:** महत्वपूर्ण समस्याओं का समाधान न प्रस्तुत कर पाने और निष्पक्षता के अभाव एवं संयुक्तराष्ट्र को उपलब्ध शक्तियों की कमी के कारण प्रमुख महाशक्तियों का संयुक्तराष्ट्र में विश्वास नहीं था।

37. शीत युद्ध के लिए किसे उत्तरदायी ठहराया जाए?

इस संबंध में तीन दृष्टिकोण हैं: परंपरागत (Traditional), संशोधनवादी (Revisionist) और उत्तर-संशोधनवादी (Post-Revisionist)।

- **परंपरागत दृष्टिकोण (Traditional View):** परंपरागत दृष्टिकोण के अंतर्गत स्टालिन को शीत युद्ध के लिए दोषी माना जाता है। वह सोवियत संघ के बाहर साम्यवाद का प्रसार और पूंजीवाद को नष्ट करना चाहता था। इस दृष्टिकोण के समर्थकों का मानना है कि नाटो (नार्थ अटलांटिक ट्रीटी ऑर्गेनाइजेशन: NATO, 1949) का गठन और कोरियाई युद्ध (1950-53) में दक्षिण कोरिया की ओर से USA का हस्तक्षेप वस्तुतः "मुक्त विश्व" (पूंजीवादी देश अपने को मुक्त विश्व कहते थे) की साम्यवाद के विरुद्ध आत्मरक्षा के लिए एक लड़ाई थी।
- **संशोधनवादी दृष्टिकोण (Revisionist View):** वियतनाम युद्ध (1961-75) में अमेरिका की आक्रामक विदेश नीति की आलोचना और कम्बोडिया में पोल पॉट (1975-79) जैसे क्रूर शासकों को अमेरिकी समर्थन के कारण यह दृष्टिकोण प्रमुख बन गया। इसके बाद यह तर्क दिया जाने लगा

34. शीत युद्ध (Cold War)

35. प्रस्तावना

- शीत युद्ध वस्तुतः द्वितीय विश्व युद्ध (1939-45) के पश्चात् 1991 में USSR (यूनियन ऑफ़ सोवियत सोशलिस्ट रिपब्लिक्स अर्थात् सोवियत संघ) के विघटन तक की घटनाओं का एक क्रम था, जिसमें दो महाशक्तियों {USSR और USA (यूनाइटेड स्टेट्स ऑफ़ अमेरिका)} के बीच आर्थिक, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी, राजनीति, सैन्य क्षेत्र और विचारधारा के स्तर पर प्रभुता के लिए प्रतिस्पर्धा बनी हुई थी। इस दौरान प्रत्येक पक्ष ने बिना किसी वास्तविक युद्ध के स्वयं को सशक्त और दूसरे को कमजोर करने की नीतियाँ अपनायी।
- इसे "शीत युद्ध" इसलिए कहा जाता है क्योंकि इस अवधि में USA और USSR ने कोई भी प्रत्यक्ष युद्ध नहीं किया। इस अवधि में जो भी युद्ध हुए वे तीसरे पक्षों के बीच लड़े गये और ये युद्ध स्थानीय स्तर तक सीमित रहे। इस प्रकार इन युद्धों का कोई व्यापक प्रसार नहीं हुआ।
- शीत युद्ध के समय विश्व दो भागों में विभाजित हो गया था; पहला, USSR के नेतृत्व में साम्यवादी विश्व और दूसरा, USA के नेतृत्व में पूंजीवादी विश्व। इस अवधि के दौरान यूरोप भी साम्यवादी पूर्वी यूरोप और पूंजीवादी पश्चिमी यूरोप में विभाजित हो चुका था।

36. शीत युद्ध के प्रमुख कारण

शीत युद्ध के कुछ प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं:

- **द्वि-ध्रुवीय विश्व:** द्वितीय विश्वयुद्ध के उपरांत प्रतिस्पर्धी सैन्य, राजनीतिक और आर्थिक हितों सहित, राज्य/समाज/सरकार की दो विभिन्न विचारधाराओं वाली दो समान महाशक्तियों का उदय।
- **पुराने संदेहों की उच्च भूमिका एवं वैचारिक मतभेद:** रूसी क्रांति (1917) के पश्चात् बोल्शेविकों ने ब्रिटेन और फ्रांस सहित उनके उपनिवेशों, शेष यूरोप और अमेरिका में स्थानीय साम्यवादी क्रांतिकारियों की सहायता के लिए अपने गुप्त एजेंटों को भेज कर साम्यवाद को विस्तारित करने का प्रयास किया। यही कारण था कि पूंजीवादी देश USSR पर विश्वास नहीं करते थे। परिणामस्वरूप, रूस को वर्साय की संधि में आमंत्रित ही नहीं किया और पूंजीवादी पश्चिमी देशों ने लम्बे समय तक USSR की सरकार को मान्यता देने से इंकार कर दिया। **रूसी गृह-युद्ध (1918-20)** के समय पश्चिमी शक्तियों (USA, फ्रांस तथा ब्रिटेन) और जापान ने बोल्शेविकों के विरुद्ध **"व्हाइट्स"** (मेंशेविक, सोशल रेवोल्युशनरी पार्टी, कैडेट्स) के पक्ष में लड़ने के लिए अपने सैनिक भेजे। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान 1944 तक ब्रिटेन और फ्रांस ने जर्मनी के विरुद्ध दूसरा मोर्चा खोलने (अर्थात् जर्मनी पर पश्चिम से आक्रमण करने का रूस का प्रस्ताव, ताकि जर्मनी को दो मोर्चों पर लड़ने के लिए विवश किया जा सके) में विलम्ब किया। उल्लेखनीय है कि 1941 में USSR पर जर्मन आक्रमण के पश्चात् से ही स्टालिन यह मांग कर रहा था। स्टालिन का मानना था कि ब्रिटेन और फ्रांस जानबूझ कर दूसरा मोर्चा खोलने में विलम्ब कर रहे थे, क्योंकि वे USSR और साम्यवाद को नष्ट करना चाहते थे।
- **विभिन्न वर्गों के आपसी हितों का संघर्ष:** प्रत्येक देश में विभिन्न वर्गों के आपसी हितों का टकराव भी इसके लिए उत्तरदायी था, क्योंकि प्रत्येक वर्ग के हित दांव पर लगे हुए थे। श्रमिक साम्यवाद का समर्थन करते थे, जबकि सम्पत्तिधारक वर्ग पूंजीवाद का समर्थन करता था। पूंजीवादियों को भय था कि साम्यवाद के प्रसार से निजी सम्पत्ति का अंत होगा और समृद्ध वर्गों की राजनीतिक शक्तियाँ समाप्त हो जाएंगी। इस संदर्भ में इन दोनों महाशक्तियों को स्थानीय समर्थन भी मिला। इस समर्थन के बिना USSR और USA तीसरे देशों के आंतरिक मामलों में लगातार और सफलतापूर्वक हस्तक्षेप नहीं कर सकते थे।

VISION IAS

2. राज्य विधानमंडल की सदस्यता

2.1 अर्हताएँ

संविधान के अनुसार राज्य विधायिका के सदस्यों के रूप में चुने जाने के लिए निम्नलिखित अर्हताएँ होनी चाहिए:

- उसे भारत का नागरिक होना चाहिए।
- उसे चुनाव आयोग द्वारा अधिकृत किसी व्यक्ति के समक्ष संविधान की तीसरी अनुसूची में निर्धारित प्रावधानों के तहत शपथ या संकल्प लेनी होती है।
- उसकी आयु विधानसभा के लिए कम से कम 25 वर्ष और विधानपरिषद के लिए कम से कम 30 वर्ष होनी चाहिए।
- उसमें संसद द्वारा निर्धारित योग्यताएं भी होनी चाहिए।

संसद द्वारा लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 द्वारा कुछ निम्नलिखित अतिरिक्त अर्हताएं भी निर्धारित की गयी है:

- विधानपरिषद में निर्वाचन के लिए किसी व्यक्ति को सम्बन्धित राज्य के किसी विधानसभा निर्वाचन क्षेत्र का निर्वाचक होना चाहिए और राज्यपाल द्वारा नामित होने के लिए उसे सम्बंधित राज्य का निवासी होना चाहिए।
- विधानसभा सदस्य बनने वाला व्यक्ति सम्बंधित राज्य के किसी निर्वाचन क्षेत्र में मतदाता भी होना चाहिए।
- यदि कोई व्यक्ति अनुसूचित जाति या जनजाति के लिए आरक्षित सीट से चुनाव लड़ता है तो उसे अवश्य ही क्रमशः अनुसूचित जाति या जनजाति का सदस्य होना चाहिए।

2.2 निरर्हताएँ

- राज्य विधानमंडल के सदस्यों के सदस्यता के लिए निरर्हताएँ (अनु. 191) संसद के सदस्यों (अनु. 102) के अनुरूप है। (सन्दर्भ के लिए केंद्रीय विधायिका के नोट्स देखें)। निरर्हता की कुछ शर्तें लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 में और दल-बदल कानून में भी वर्णित हैं। अनु. 191 के तहत या लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 के आधार पर राज्य विधानमंडल के किसी सदस्य के निरर्हता संबंधी प्रश्न पर राज्यपाल चुनाव आयोग की राय के अनुसार फैसला करेगा। आयोग की राय राज्यपाल पर आबद्धकर है। इस सम्बन्ध में राज्यपाल का निर्णय अंतिम होगा।

नोट: दल-बदल विरोधी क़ानून से सम्बन्धित प्रावधानों का वर्णन केंद्रीय विधायिका वाले अध्याय में किया गया है।

2.3 स्थानों का रिक्त होना

राज्य विधानसभा का कोई सदस्य निम्नलिखित मामलों में अपने स्थान को रिक्त करता है:

- **दोहरी सदस्यता:** कोई व्यक्ति एक साथ राज्य विधानमंडल के दोनों सदनों का सदस्य नहीं रह सकता है। यदि कोई व्यक्ति दोनों सदनों के लिए निर्वाचित हो जाता है तो राज्य विधानमंडल द्वारा बनायी गयी विधि के तहत एक सदन से उसका स्थान रिक्त हो जाएगा।
- **निरर्हता:** राज्य विधानमंडल का कोई सदस्य यदि निरर्ह या अयोग्य पाया जाता है तो उसका स्थान रिक्त हो जायेगा।
- **त्यागपत्र:** कोई सदस्य अपना लिखित त्यागपत्र विधानपरिषद के सभापति या विधानसभा के अध्यक्ष को सौंप सकता है। त्यागपत्र स्वीकार हो जाने के बाद उसका स्थान रिक्त हो जायेगा।
- **अनुपस्थिति:** राज्य विधानमंडल किसी सीट को रिक्त घोषित कर सकती है यदि कोई सदस्य बिना किसी पूर्व अनुमति के 60 दिनों तक अनुपस्थित रहता है।
- **अन्य मामले:** राज्य विधानमंडल के किसी भी सदन से किसी सदस्य का पद रिक्त हो सकता है-
  - यदि न्यायालय द्वारा उसके निर्वाचन को अमान्य ठहरा दिया जाए,
  - यदि उसे सदन से बर्खास्त कर दिया जाए,
  - यदि वह राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति के पद पर निर्वाचित हो जाए और
  - यदि वह किसी राज्य का राज्यपाल नियुक्त हो जाए।

VISION IAS

- इसी क्रम में इसकी आलोचना करते हुए कहा गया कि आर्थिक रूप से कमजोर राज्य दो सदनों के अपव्यय का खर्च वहन नहीं कर सकते हैं। इस प्रकार, इस व्यवस्था को प्रत्येक राज्य की इच्छा पर छोड़ दिया गया कि वे द्विसदनीय व्यवस्था को अपनाते हैं या नहीं। इस प्रावधान के तहत, आंध्र प्रदेश ने 1957 में अपने यहाँ विधानपरिषद का गठन किया तथा इसी प्रक्रिया के तहत 1985 में इसे समाप्त कर दिया। 1986 में तमिलनाडु में और 1969 में पंजाब तथा पश्चिम बंगाल में विधानपरिषद को समाप्त कर दिया गया।

1.3. विधानसभा

- प्रत्येक राज्य की विधानसभा प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों से व्यस्क मताधिकार के आधार पर प्रत्यक्ष चुनाव द्वारा निर्वाचित सदस्यों से निर्मित होती है। विधानसभा के सदस्यों की संख्या उनकी जनसंख्या के आधार पर 500 से ज्यादा और 60 से कम नहीं हो सकती।
- हालाँकि, अरुणाचल प्रदेश, सिक्किम और गोवा के मामले में न्यूनतम संख्या 30 तय है और मिजोरम के मामले में यह 40 है। इसके अतिरिक्त सिक्किम और नागालैंड के कुछ सदस्यों का निर्वाचन परोक्ष रीति से भी किया जाता है।
- राज्यपाल आंग्ल-भारतीय समुदाय से एक सदस्य को मनोनीत कर सकते हैं, यदि उनका पर्याप्त प्रतिनिधित्व विधानसभा में नहीं हो। संविधान द्वारा प्रत्येक राज्य में जनसंख्या अनुपात के आधार पर अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए सीटों के आरक्षण का प्रावधान किया गया है। प्रत्येक जनगणना के बाद पुनः समायोजन भी किया जाता है।

1.4. विधानपरिषद

- विधानपरिषद के सदस्य परोक्ष रूप से निर्वाचित होते हैं। विधानपरिषद की सदस्य संख्या विधानसभा की सदस्य संख्या के अनुरूप बदलती रहती है। परिषद की सदस्य संख्या सभा के एक तिहाई से अधिक नहीं हो सकती है और 40 (जम्मू-कश्मीर एक अपवाद है जहाँ विधानपरिषद में 36 सदस्य हैं) से कम नहीं हो सकती है। इस प्रावधान को इसलिए अपनाया गया है ताकि उच्च सदन विधानमंडल में ज्यादा प्रभावशाली ना हो जाए।

हालांकि संविधान द्वारा अधिकतम और न्यूनतम सदस्य संख्या तय कर दी गयी है, लेकिन परिषद की वास्तविक संख्या संसद द्वारा तय की जाती है। विधानपरिषद का गठन निम्नलिखित रीति से होता है:

- 1/3 सदस्य स्थानीय निकायों जैसे नगर पालिकाओं, जिला बोर्डों, आदि के सदस्यों द्वारा चुने जाते हैं।
- 1/3 सदस्यों का निर्वाचन राज्य विधानसभा के सदस्यों द्वारा किया जाता है।
- 1/12 सदस्यों का निर्वाचन राज्य में रहने वाले ऐसे व्यक्तियों द्वारा होता है जो किसी विश्वविद्यालय के कम-से-कम तीन वर्ष से स्नातक हैं।
- 1/12 सदस्यों का निर्वाचन 3 वर्ष से अध्यापन कर रहे लोग करते हैं, लेकिन ये अध्यापक माध्यमिक विद्यालयों से कम के नहीं होने चाहिए।
- बाकी बचे हुए सदस्यों (1/6) का मनोनयन राज्यपाल द्वारा उन लोगों के बीच से किया जाता है जो साहित्य, विज्ञान, कला, सहकारिता आन्दोलन और समाज सेवा का विशेष ज्ञान व व्यावहारिक अनुभव रखते हों।

इस प्रकार, मोटे तौर पर अगर कहा जाए तो 5/6 सदस्यों का निर्वाचन परोक्ष चुनाव के द्वारा होता है और 1/6 सदस्य राज्यपाल द्वारा मनोनीत किए जाते हैं।

VISION IAS